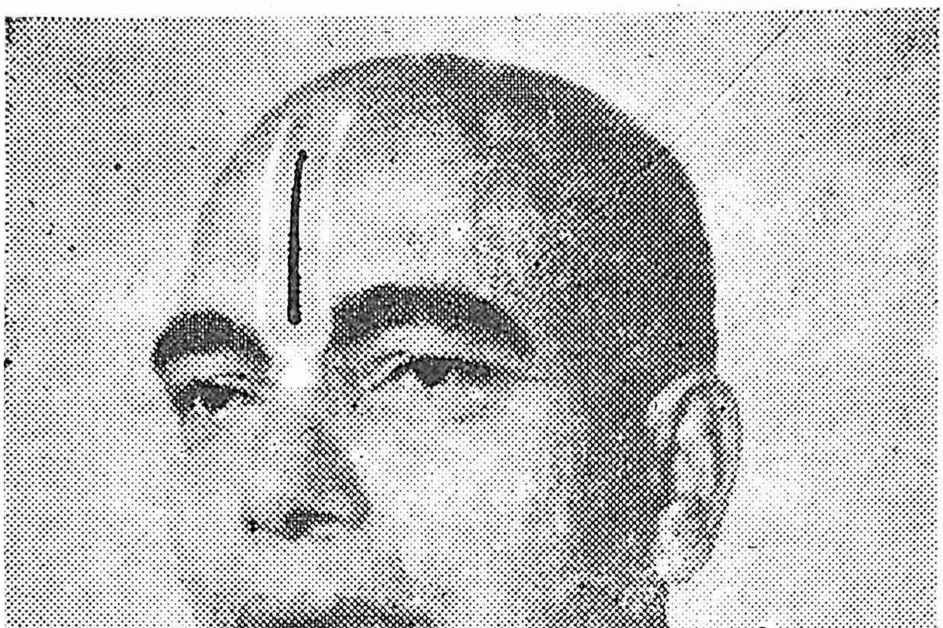

श्रीमहान्त पण्डित स्वामी श्री जयरामदासजी महाराज
अहमदाबाद

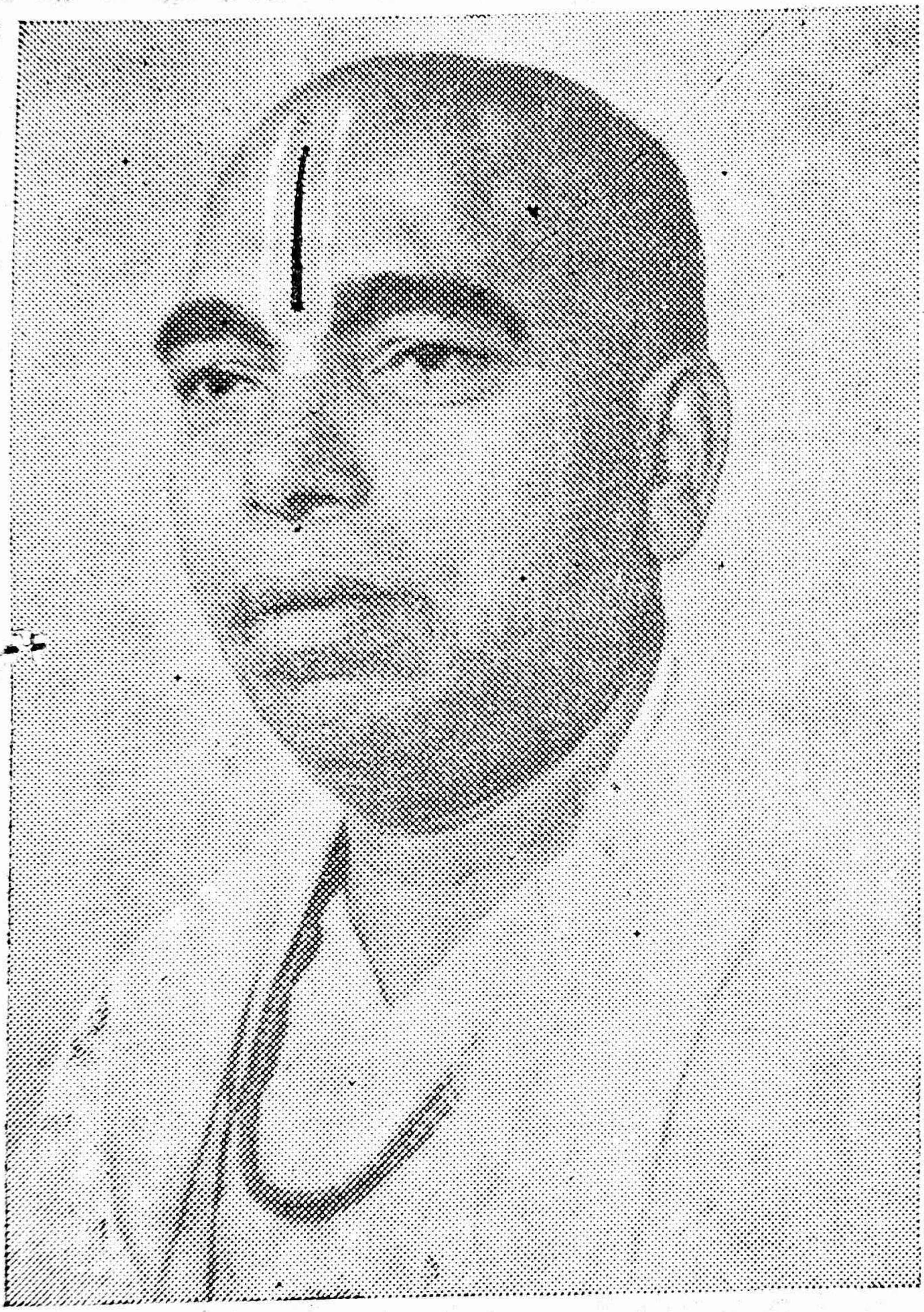

श्रीजयरामदासोऽयं परोपकारीसज्जनः।
सुहृत्प्रियो महात्मा च श्रीरामोपासनाव्रती ॥

आभार और समर्पण

साकेतवासी श्रीरामानन्दाचार्य स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी तथा पंडित सम्राट श्रीवैष्णवाचार्यजी महाराज इन दोनों महापुरुषों का अंतःकरण से मैं आभार मानता हूँ।

पूजनीय श्रीवैष्णवाचार्यजी महाराज तथा वेदान्ताचार्य श्रीरामबालकाचार्यजी महाराज एवं पंडित श्रीरामशर्मा शास्त्रीजी का सतत प्रेरणा एवं प्रेमपूर्ण आग्रह का फलस्वरूप यह 'श्रीरामाञ्जलिशतकम्' भक्त विद्वानों के सामने है। यद्यपि मैंने अपने मनकी बात जिस तरह अभिव्यक्त करना चाहता था, उस तरह अभिव्यक्त नहीं कर सका। फिर भी जो कुछ मुझ से बन पड़ा है, वह श्रीरामजी की कृपा है।

एक मुख्य बात यह है कि एक बार शारीरिक असह्य वेदना के कारण मैंने रामजीको बहुत से कठोर शब्द बोल दिये। फिर क्या हुआ! वह सब कहना यहाँ संगत नहीं है। लेकिन जो चराचर जगत् के स्वामी होते हुए गाली सुन कर भी हँसते हुए माफ करदे, पापों को धो दे। इससे बढ़कर दयालुता कहाँ पा सकते हैं? उन्हीं प्रभु की प्रेरणा से मैं लिखने को प्रेरित हुआ।

उपरोक्त महानुभावों के आभार सहित परात्पर प्रभु साकेत विहारी भगवान श्रीराघवेन्द्र सरकार के मधुर, मनोहर, मंगलमय, चरण-कमलों में यह 'श्रीरामाञ्जलिशतकम्' समर्पित करता हूँ।

मैं कृतज्ञ हूँ

अनादि वैदिक परंपरा अनुगत पंडित श्रीजयरामदासजी महाराज आयुर्वेदाचार्यजी,- जो अभी श्रीरणछोड़ जी का मंदिर 'वउनीपोल' रायपुर तथा श्रीरंगीला हनुमान सरसपुर इन दोनों संपन्न स्थानों के महान्त भी हैं।

आप अति उत्साही एवं सत् साहित्य प्रेमी महान्त हैं। संत सेवा में भी आपकी असीम रूचि और श्रद्धा है। आप स्वयं साहित्य स्रजक भी हैं। ज्ञान, भक्ति, कर्म, उपासना आदि भगवत् संबधी आध्यात्मिक साहित्य लेखकों को पवित्र प्रेरणा देने में आप संलग्न रहते हैं। आपकी ही पवित्र प्रेरणा से मैंने भी इस 'श्रीरामाञ्जलि-शतकम्, को प्रभुके चरणों में समर्पित करने का प्रयत्न किया है। आप के ही द्वारा प्रकाशित भी है। अतः मैं आपका शतशः कृतज्ञ हूँ।

एतेषां वैष्णवकुलकमलदिवाकराणां
गुणलुब्धानां श्रीमतां गुणैःकृतोऽस्मिदासः

पं० श्रीरामसकलदासशास्त्री

सम्मतिः

वन्दनाभक्तेर्महत्वं शास्त्रेषु वर्णितम। अनंतकोटिब्रह्माण्ड-नायकस्य सुरमुनिरक्षकासाधुखलासुरभक्षकसीतापतिरघुनन्दन-वन्दना रामस्य भक्तिं कर्तुमेतानि स्तोत्राणि महत्त्वपूर्णानि वर्तन्ते। श्रीरामसकलदासः गीर्वाणगिराया विद्वानपि भक्तिपूर्ण हृदयः। आशासे यत् पाठकगण एतेषां स्त्रोत्राणां पाठं कृत्वा मनस्यानन्द मनुभविष्यति। पं० श्रीजयरामदासः

श्रीरामः शरणं मम

श्री हनुमते नमः

भावाञ्जलिस्तोत्रम्

॥ १ ॥

सर्वात्मनखिलाधार दिव्यशक्तिसमन्वित ।
शान्त सर्वसुहृद्देव श्रीमद्राम नमोऽस्तु ते ॥

संपूर्ण प्राणियों के आत्मा और चराचर जगत् के आधार, दिव्यशक्तिसंपन्न, शांतस्वरूप, प्राणिमात्र के सुहृद, हे देव! श्री रामजी? आप को नमस्कार है।

॥ २ ॥

नमोऽनन्ताय दिव्याय नमः परमतेजसे।
नमो धर्मस्वरूपाय श्रीसीतापतये नमः॥

जिनका अंत कोई न पा सका, उन परमेश्वर को मैं नमस्कार करता हूँ। जो दिव्य हैं तथा परम तेजोमय हैं, उन प्रभु को नमस्कार है। जो धर्म के स्वरूप हैं, उन श्रीसीताजी के स्वामी श्रीरामजी को मेरा नमस्कार है।

॥ ३ ॥

नमामि सर्वतोभद्रं दिव्यसिंहासने स्थितम्।
आदिदेवं परं बीजं रामं मायापतिं हरिम्॥

सभी तरह से कल्याणमयस्वरूपवाले दिव्यसिंहासन पर विराजमान, आदिदेव, सृष्टिके मुख्यकारण, माया के स्वामी श्री रामजी को मैं नमस्कार करता हूँ।

॥ ४ ॥

आनन्दैकस्वरूपाय रामाय समदर्शिने।
अधर्मध्वंसिने नित्यं नमोऽजाय महात्मने॥

जिनका एक मात्र आनन्दमय स्वरूप है, जो समदर्शी हैं, तथा अधर्म को नाश करने वाले हैं। अजन्मा उन महात्मा राम को मैं नमस्कार करता हूँ।

॥ ५ ॥

गुरुञ्च शारदां वन्दे अज्ञानतिमिरापहौ ।
अञ्जनीनन्दनं वीरं भक्तभीतिविनाशकम् ॥

अज्ञान-रूप अंधकार को नष्ट करनेवाले श्रीगुरुदेव तथा सरस्वती देवी की मैं वन्दना करता हूँ। जो अपने भक्तों के भय को नाश करने वाले हैं, अंजनी को आनन्द देनेवाले, उन वीरशिरोमणि श्रीहनुमानजी को मैं वन्दना करता हूँ।

॥ १ ॥

परं देवं हित्वा नलिननयनं चिन्मयमहो
कृपासिन्धुं रामं मुनिगणसुसेव्यं सुरगुरुम् ।
असारे संसारे लवमपि न सारेऽपि च दहन्
प्रमादे वादे वा सततमिह संयान्ति दिवसाः ॥

आश्चर्य है ? कि दया के सागर, मुनियों से सम्यक् प्रकार सेवित देवताओं के पूज्य, कमल के समान नेत्र-वाले, चिन्मय, जो देवों के भी देव हैं, उन श्रीरामजी को छोड़कर जिसमें थोड़ा भी सार नहीं है, ऐसे संसार में अनेक प्रकार के दुःखों से जलते हुए निरंतर वादविवाद अथवा प्रमाद में मेरा समय बीत जाता है।

॥ २ ॥

न मन्त्रे योगे नोऽसुररिपुकथायां नहि मतिः
कदापि ध्यानं वा कृतमपि न सन्तापशमनम् ।
न वा ते पूजाया विधिविहितबुद्धी रघुपते
कथं त्वां जानेऽहं परम गहनं वाण्यविषयम् ॥

न तो आपके मंत्र जप में, न योग साधना में तथा असुरों को दमन करनेवाले आपकी कथा में भी मेरी मति नहीं लगती। हे राम विधिपूर्वक तुम्हारी पूजा नहीं कर सका। अथवा जन्म मरणरूप संताप को दूर करने वाला आपका ध्यान भी मैंने नहीं किया। इन्द्रीयातीत आप को तो जान ही कैसे सकता हूँ।

॥ ३ ॥

अभीष्टं सन्तुष्टः सकलफलदाता स्थिरमति-
र्न पात्रं वाऽपात्रं गणयति सुराणां क्षितिरुहः ।
ददातीति ख्यातिः प्रसरति च सम्पूर्णभुवने
परं कालाघातैस्त्वमसि भगवन् वारणमलम् ॥

याचकों के प्रति खुश हुआ भेदबुद्धिरहित कल्पवृक्ष पात्र अथवा अपात्र का विचार किये बिना सभी प्रकार के अभीष्ट फलों को प्रदान करता है। इस हेतु से उसकी (कल्पवृक्ष की) ख्याति संपूर्ण संसार में फैली हुई है परन्तु

हे भगवान् ! प्रचंड काल के मृत्युरूप प्रहारो से बचाने में आप ही समर्थ हैं ।

॥ ४ ॥

जनानां सर्वस्वं जनिमृतिभयाद्रक्षक विभो
गुणानां कः पारं व्रजति सततं गाननिरतः ।
न शेषः संपूर्णं तव गुणगणं मङ्गलमयं
परं वाणीशुद्धिर्भवति कथनात्प्रेमसहितम् ॥

हे विभो ! जन्म मरण रूप भय से रक्षा करनेवाले, अपने भक्तों के सर्वस्व, आपके मंगलमय गुणों को निरन्तर वर्णन करने में लगा हुआ कौन ऐसा है, जो पार पा सकता है? आपके संपूर्ण गुण समुदाय का तो पार भगवान् शेष भी नहीं पा सकते, लेकिन प्रेम से आपके गुणों का गान करने से वाणी पवित्र होती है ।

॥ ५ ॥

न चित्रं मन्येऽहं विहरति हरिर्भक्तपुरतो
लभन्ते विश्रामं रघुपतिशरैर्देवविमुखाः ।
सदाध्याने मग्नान् मलिनगुणदोषाद् विरहितान्
करालोयं कालः कवलयति किं रागविरतान् ॥

भगवान् अपने भक्तों के साथ आमोद-प्रमोद करते हैं, इस विषय में मैं आश्चर्य नहीं मानता, क्योंकि संग्राम भूमि में रघुनाथ जी के बाणों से मरकर अधम राक्षस भी परम पद पा लेते है । जो निरन्तर ध्यान में लीन हैं ।

रजोगुण और तमोगुण के दोषों से रहित हैं तथा संसार की आसक्ति से अलग है, क्या यह प्रचंड काल उनका अस्तित्व कभी मिटा सकता है ?

॥ ६ ॥

पदाम्भोजे नानाशुभफलदचिन्हं रघुपते !
महिम्ना ते गङ्गा दुरितचयनाशञ्च कुरुते ।
निरालम्बालम्ब श्रवणपुटपेया तव कथा
ममान्तर्ध्वान्तं त्वं धवलनखधाम्ना शमयतु ॥

हे रघुनन्दन ! आपके चरण कमलों में शुभफल प्रदान करनेवाले ध्वज, अंकुश आदि चिन्ह सुशोभित हैं । आप की ही महिमा से महिमान्वित होकर गंगा पाप-समूह को नाश करती है । हे निराधारों के आधार आप का कथामृत श्रवणरूप दोने से पीने योग्य है । मेरे हृदय में जो अज्ञानरूप अंधकार है, उसे आप अपने उज्ज्वल नखों के प्रकाश से नष्ट कर दोजिये ।

॥ ७ ॥

अभीष्टं मिष्टं यद् ध्वनिचरमगीतं मधुमयं
हरेर्नामाधानं परमरमणीयं रसमयं ।
विपाकं सन्तापं दहति सकलं मूलसहितं
तथा सर्वैर्ज्ञेयं मुनिजननिधानं सुखमयम् ॥

हरि का नाम प्रेम से उच्चारण करना मधुर अभिलषित फल है। नाम की ध्वनि संपूर्ण गीतों की परा काष्ठा है। आनन्दरूपी रस से भरपूर है, अत्यन्त रमणीय एवं अमृतमय है। कर्मों के विपाक तथा संताप को जड़से भस्म कर देता है। तथा मनुष्य मात्र के लिये जानने योग्य है। मुनियों का धन और सुखमय है।

॥ ८ ॥

दयासिन्धो बन्धो हरसि दयया संग्रहकृतं
धनं धन्यस्त्राता त्रिविधभवदुःखात्सुरगुरो।
धराधीशाधीश प्रणतभयहारिन् रघुपते
पिता माता त्राता त्वमसि मम बिम्बाधर विभो॥

हे दीन बन्धो! हे दया के समुद्र! आप जिसे अपना कृपापात्र बनाना चाहते हैं तो उसका संग्रह किया हुआ धन पहले हर लेते हैं। यह आपकी अपार दया है। क्योंकि आप का प्रियपात्र बनने में धन भी बाधक है। आप धन्य हैं। दैहिक, दैविक और भौतिक इन तीनों तापों से आप रक्षा करने वाले हैं, ! हे रघुनन्दन! आप राजाओं के भी राजा हैं, भक्तों के भय हरने वाले! बिम्ब के समान अधरवाले हे विभो! आप ही मेरे माता, पिता और रक्षक हैं।

॥ ९ ॥

गुणैर्युक्तं मुक्तं प्रकृतिगुणपारं शिवनुतं
सदा भान्तं दान्तं दनुजकुलकालं समरसम् ।
रमाकान्तं शान्तं विमलमतिमाप्तस्य विषयं
भजे श्रीरामं तं स्मितशतशशिस्वच्छदशनम् ॥

दिव्यगुणों से युक्त, बंधनरहित, प्रकृति के सत्त्व आदि गुणों से परे शंकर द्वारा नमस्कृत, सदा प्रकाशस्वरूप, इन्द्रियजयी, दानवों के समुदाय को नष्ट करने वाले सदा एकरस, लक्ष्मी के पति शान्तस्वरूप निर्मल बुद्धिवाले तथा आप्त पुरुषों के विषय, जिनकी मंदमुस्कान से सैकड़ों चंद्र के समान स्वच्छ दंतपंक्ति दिखाई देती है, उन श्रीरामजी को मैं भजता हूँ।

॥ १० ॥

चिदानन्दं धीरं समरवरवीरं रघुपतिं
मनोज्ञं सर्वज्ञं वरवसनशोभामयतनुम् ।
हृदि ध्येयं ज्ञेयं विधिहरिशिवैः सेव्यमनिशं
भजे श्री रामं तं स्मितशतशशिस्वच्छदशनम् ॥

जो चित् अनन्दरूप, परमधीर संग्राम में अद्वितीय पराक्रम वाले रघुकुल के स्वामी, मन को सुन्दर लगने वाले सर्वज्ञ दिव्य वस्त्रों से जिनके शरीर की शोभा अत्यन्त रमणीय है, हृदय कमल में ध्यान करने योग्य, जानने योग्य

तथा ब्रह्मा, विष्णु और शंकर द्वारा निरन्तर सेवित, जिनको मन्द मुसुकान से सैकड़ों चन्द्र के समान स्वच्छ दंतपंक्ति सुशोभित है, उन श्रीरामजी को मैं भजता हूँ।

॥ ११ ॥

सुरेशं सर्वेशं निखिलजगदीशं शशिमुखं
निराकारं देवं रविशतनिभं दिव्यवपुषम् ।
मनोरम्यं गम्यं धृतवनजमालं मधुरिपुं
भजे श्रीरामं तं स्मितशतशशिस्वच्छदशनम ॥

जो देवताओं के ईश्वर तथा संपूर्ण प्राणियों के ईश्वर एवं निखिल संसार के स्वामी हैं। जिनका चन्द्र के समान मुख है। जो अप्राकृत विग्रह वाले हैं, जिनकी कांति सैकड़ों सूर्य के समान देदीप्यमान है, जो सुन्दर बन-माला धारण किये हैं तथा जो मधु दैत्य का विनाश करने वाले हैं, जिनकी मंद मुसुकान से सैकड़ों चंद्र के समान स्वच्छ दंतपंक्ति दिखाई देती है, उन श्रीरामजी को मैं भजता हूँ।

॥ १२ ॥

सदा सिद्धैः सेव्यं त्रिभुवनपतिं मङ्गलमयं
महाधीरं वीरं कमलनयनं कान्तवपुषम् ।
गिरातीतं पूतं श्रुतिगणसुगीतं रघुपतिं
भजे श्रीरामं तं स्मितशतशशिस्वच्छदशनम् ॥

निरन्तर सिद्धों से सेवित तीनों लोकों के स्वामी, मंगलमय स्वरूपवाले संग्राम भूमि में अचल रहनेवाले, वीरशिरोमणि कमल के समान नेत्रवाले, जिनके शरीर की कांति अत्यंत कमनीय है, वाणी के अविषय, परम पवित्र वेद जिनका निरंतर यशोगान करते हैं तथा जो रघुकुल के स्वामी हैं, जिनकी मन्द मुसुकान से सैकड़ों चंद्र के समान स्वच्छ दंतपंक्ति सुशोभित होती है, उन श्रीरामजी को मैं भजता हूँ।

॥ १३ ॥

जनैर्दत्तं द्रव्यं प्रियजनहिताथ हि कुरुते
भवान् पूर्णानन्दो ग्रहणमनिशं प्रेमसहितम् ।
उदाराणां श्रेष्ठो रघुकुलमणिर्मङ्गलमयो
भवेन्मग्नं नित्यं तव चरणयोरन्तरमनः ॥

आप पूर्ण आनंदस्वरूप हैं, तथापि अपने भक्तों के द्वारा अर्पित पूजा द्रव्य को उनके कल्याण के लिए अत्यंत प्रेम से निरंतर ग्रहण करते हैं। आप के समान दूसरा कोई उदार नहीं है। रघुकुल में श्रेष्ठ मङ्गलमय स्वरूपवाले आप के चरणों में मेरा मन निरंतर संलग्न रहे।

॥ १४ ॥

श्रियाराध्यं साध्यं सकलसुरवन्द्यं सुरगतिं
समासीनं पीठे अरुणजलजाभं भयहरम् ।
सदा सिद्धैः सेव्यं ललितललितं दुःखदलनं
भजे नित्यं कान्तं रघुपतिपदं शोकशमनम् ॥

श्रीलक्ष्मी द्वारा आराधित, भक्ति द्वारा प्राप्त करने योग्य, सभी देवताओं के वंदनीय तथा अधारस्वरूप दिव्य सिंहासन पर विराजमान, लाल कमल के समान कांतिवाले, भक्तों के भय को दूर करने वाले नवनीत से भी कोमल तथा अत्यन्त सुन्दर सभी प्रकार के दुःखों को नष्ट करनेवाले तथा शोक को शमन करनेवाले श्रीरघुनाथ जी के सुन्दर चरणकमलों को मैं निरंतर भजता हूँ ।

॥ १५ ॥

अहो आयुः स्वल्पं प्रतिदिनमिदं गच्छति शनै-
र्महामोहाक्रान्तं विषयसुखसक्तं विपथगम् ।
महाक्लेशो लेशं सुखमिह न संभावयसि किं
मनः सर्वं त्यक्त्वा व्रज रघुपतेराशुशरणम् ॥

आश्चर्य है ! एक तो जीवन अत्यंत सीमित है और हर रोज मृत्यु की ओर बढ़ता जाता है । महामोह से आक्रांत विषयसुख में आसक्त तथा विपरीत मार्ग में जानेवाले हे मन ! इस संसार में किस सुख की संभावना करता है ?

अतः सभी प्रपंचों को छोड़कर रघुनाथजी के शरण में जल्दी जा।

॥ १६ ॥

अहं मन्ये स्वामिन् प्रकृतिसुकुमाराङ्ग भगवन्
न दासानां दासो जलधररुचे पंकजमुख ।
परं सिद्धं शास्त्रे निजजनसुरक्षाव्रतमहो
कुभृत्यं दीनं मां शरण-पतितं रक्षतु हरे ॥

स्वभाव से ही सुकुमार, नील मेघ के समान कांति-वाले कमल के समान मुखवाले, हे भगवान् ! हे स्वामिन् ! मैं मानता हूँ कि आप के दासों का भी दास होने लायक नहीं हूँ। लेकिन यह बात शास्त्रों में सिद्ध हो चुकी है कि शरणागतों की रक्षा करना आपका व्रत है। हे हरे ! अपनी शरण में पड़े हुए मुझ दीन कुदास की रक्षा कीजिए।

॥ १७ ॥

इदं चित्तं वित्ते विहरति सदा भोगनिरतं
मनो मिथ्यासृष्टिं सृजति मलिनं मोहविवशम् ।
तथा मोघा तृष्णा दहति नितरां निष्ठुरतया
कृतं पूर्वं कर्म स्मरणपथमागत्य तुदति ॥

सदा संसार के सुखों में लीन, यह चित्त धनप्राप्ति में ही आनंद मानता है। मोह में पड़ा हुआ यह मलिन मन सतत मिथ्या सृष्टि किया करता है। तथा निरर्थक

तृष्णा निर्दयता से निरंतर जलाती रहती है। पहले के किये कर्म जब याद आते हैं, तब मर्ममें तीव्र वेदना होती है।

॥ १८ ॥

प्रसन्नार्थं स्तोत्रं लिखितमिह यद् भावसहितं
पठेद् ध्यायन् रामं स्मितमुखमपि स्नेहसहितम्
मनोवेगः शान्तः प्रभवति कृपातो रघुपतेः
परं दिव्यं स्थानं व्रजति स च सन्तापशमनम् ॥

श्री रामजी की प्रसन्नता के लिए लिखा गया यह स्तोत्र श्रद्धा से युक्त होकर मन्दस्मित मुखवाले श्रीरामजी का ध्यान करता हुआ जो पाठ करता है, तो रघुनाथजी की कृपा से उसके मन की चंचलता शांत हो जाती है। तथा संताप दूर करने वाले श्री रामजी के सर्वोत्तम एवं दिव्य स्थान को प्राप्त करता है।

श्रीजानकीजीवनाष्टकम्

॥ १ ॥

निर्गुणं निर्विकल्पं तुरीयं पदं
निष्कलं निर्विकारं परं पावनम् ।
सर्वगं सन्ततं जानकीजीवनं
कारणं कारणानां भजेऽहं सदा ॥

जो प्रकृति के गुणों से रहित हैं, निर्विकल्प स्वरूप हैं, तुरीय अवस्था में स्थित, अत्यंत सूक्ष्म विकार रहित,

परम पवित्र, सभी जगह पर व्याप्त श्री जानकीजी के सदा प्राणों के समान प्रिय तथा कारणों के भी जो कारण हैं, उन प्रभु को मैं सदा भजता हूँ।

॥ २ ॥

दुस्तरं संयुगे भीषणं भीषणाद्
दोषमुक्तं कृतान्तं कृतान्तान्तकम्।
मञ्जुलं मञ्जुलानाञ्च गात्रं परं
पावनं पावनानां नमामीश्वरम् ॥

जो युद्धभूमि में काल से भी अधिक भयानक हैं, सभी दोषों से मुक्त कालस्वरूप तथा जो मृत्यु के भी मृत्यु हैं, अत्यन्त मधुर रमणीय शरीर वाले, पवित्र को भी पवित्र करने वाले, उन ईश्वर को नमस्कार करता हूं।

॥ ३ ॥

मानुषाकारमोङ्कारमूलं हरिं
शारदाम्भोजनेत्रं प्रसन्नाननम्।
चर्चितं चन्दनैर्भालदेशे शुभं
मन्दमन्दस्मितं रामचन्द्रं भजे ॥

माया को आश्रय करके मनुष्य शरीर ग्रहण करनेवाले ओमकार के मूलस्वरूप, हरि, शरदऋतु के खिले हुए लाल कमल के समान नेत्रवाले जा सदा प्रशन्न वदन रहते हैं,

जिनका ललाट पवित्र चंदन से सुशोभित है तथा जिनके मुख पर मन्दमुस्कान है, उन श्रीरामजी को मैं भजता हूँ।

॥ ४ ॥

रामचन्द्रं सुरारातिसन्तापदं
राजराजेश्वरं साधुसम्पूजितम्।
मङ्गलं श्रीधरं श्रीपतिं सुन्दरं
सर्वदा सर्वदं तं भजेऽहं मुदा ॥

जो देवताओं के शत्रु असुरों को संताप देने वाले हैं, जो राजाओं में श्रेष्ठ हैं, साधु पुरुषों से पूजित हैं, मगलमय विग्रह वाले और अनुपम शोभावाले हैं, लक्ष्मी के स्वामी, स्वाभाविक सौदर्न्य युक्त तथा जो सभी प्रकार की अभिलाषा पूर्णकरनेवाले हैं, उन रघुनंन्दन को मैं निरंतर भजता हूँ।

॥ ५ ॥

मायया नित्यगूढाय शान्तात्मने
रामचन्द्राय चन्द्राननायात्मने।
साक्षिणे मालिने वालिविध्वंसिने
वेदवेद्याय रामाय तुभ्यं नमः ॥

त्रिगुणमयी माया से जिनका वास्तविक स्वरूप ढंका हुआ है जो शांत स्वरूप हैं, चंन्द्र के समान मुखवाले,

आत्मस्वरूप, साक्षीमात्र, सुंदर मालाधारण करनेवाले हैं, वाली बिध्वंस करने वाले तथा वेदों के द्वारा जानने योग्य, उन श्रीरामजी को मैं नमस्कार करता हूँ।

॥ ६ ॥

सुन्दरः सिन्धुसन्तापहारी हरि-
र्मेदिनीरक्षको राक्षसध्वंसकः।
पङ्कजांघ्रिः सुवेशः सुरेशेश्वरः
संश्रितं पाहि मां पाहि मां पाहि माम् ॥

दिव्य सौन्दर्यवाले, समुद्र का संताप हरनेवाले, राक्षसों के विनाशक, पृथ्वी की रक्षा करनेवाले, तथा जिनके चरण कमल के समान हैं, सुन्दरवेश से युक्त, इन्द्र के भी ईश्वर, हे हरि। आप अपने आश्रित मेरी रक्षा कीजिये मेरी मेरी रक्षा किजए मेरी रक्षा कीजिए।

॥ ७ ॥

रावणारे मुरारे खरारे प्रभो
जानकीसंयुत श्रद्धया सेवित।
उत्तमश्लोक हे सर्वलोकेश्वर
श्रीनिधे गोपते भूपते पाहिमाम् ॥

रावण के शत्रु, मुरदैत्य के विनाशक, हे खरारे! श्रीजानकी जी के साथ बिराजमान, श्रद्धा द्वारा सेवित, उत्तम कीर्तिवाले, सर्वलोकों के अधीश्वर, लक्ष्मीजी के सर्वस्व, इन्द्रियों के स्वामी, हे पृथ्वीपते! मेरी रक्षा किजिए।

॥ ८ ॥

नित्यशुद्‌ध प्रबुद्‌ध प्रकृष्ट प्रभो
घोरसंसारदुःखैरनन्तैः सदा ।
शोकसन्तापतप्तं प्रपन्नं परं
पीडितं निर्बलं निर्गुणं रक्ष माम् ॥

नित्य शुद्धस्वरूप, ज्ञानस्वरूप, तथा सर्वश्रेष्ठ हे प्रभो ! इस भयानक संसार के अनन्त दुःखों से सदा पीडित, शोकरूप ताप से संतप्त, निर्बल तथा गुणरहित मेरी रक्षा कीजिए ।

॥ ९ ॥

स्तोत्रमेतद्‌धि नित्यं पठेद्‌यः सुधीः
सूत्तमं पापनाशं पवित्रं परम् ।
भक्तिदं भुक्तिदं मुक्तिदं मङ्गलं
मानवः श्रेष्ठलोकं व्रजेत् स ध्रुवम् ॥

पाप समुदाय का नाश करने वाला, परमपवित्र, भक्ति, संसार के सुख तथा मुक्ति प्रदान करनेवाला, मंगलमय इस उत्तम स्तोत्रका जो बुद्धिमान मनुष्य नित्य पाठ करता है, वह निश्चय ही ईश्वर के उत्तम लोक को प्राप्त करता है ।

श्रीरामशरणाष्टकम्

॥ १ ॥

श्रीरामचन्द्र रघुनन्दन भक्तरक्षिन्
संसाररोगजनितान्तरतीक्ष्णपीडाम् ।
कस्त्वां विना रघुपते शमने समर्थ-
स्तस्माद् गतिस्त्वमसि मे भगवन् दयालो ॥

हे श्री रामचन्द्र हे रघुनन्दन ! हे भक्तों की रक्षा करने वाले रघुपते ! इस संसार के रोगों से होने वाली असह्य वेदना को आप के सिवा दूसरा कौन ऐसा है, जो दूर कर सके ! अतः हे भगवन् हे दयालो ! तुम्हीं एकमात्र मेरे आधार हो ।

॥ २ ॥

प्राणप्रयाणसमयं स्मरणञ्च कृत्वा
नक्तं दिवं दहति मामतिशोकवह्निः ।
प्राणप्रयाण-समये स्मरणं भवेच्चे
तस्माद् गतिस्त्वमसि मे भगवन् दयालो ॥

प्राण निकलने के समय जो दुःख होता है उसे याद करते ही शोकरूपी अग्नि बढ़ जाती है और निरंतर जलाती रहती है। बस इतनी दया करना कि प्राण निकलने के समय आप का स्मरण हो अतः हे भगवन् ! हे दयालो तुम्हीं मेरे आधार हो ।

॥ ३ ॥

कामादयश्च सततं परिपीडयन्ति
तस्माद् भवामि नितरां विफलप्रयासः ।
त्राता न कोऽपि रघुनाथ महीतले मे
तस्माद् गतिस्त्वमसि मे भगवन् दयालो ॥

कामादि विकार निरंतर पीडित करते रहते हैं इस लिए मैं अपने प्रयत्न में सदा असफल रहता हूँ। हे रघुनाथ जी ! आप जैसा समर्थ रक्षक इस पृथ्वी पर मेरा दूसरा कोई नहीं है। इसलिए हे भगवन्। हे दयालो। तुम्हीं एक मात्र मेरी गति हो ।

॥ ४ ॥

किं किं मया न दुरितं चरितं दयालो
आपद्गतं कमललोचन मामरक्षः ।
कस्त्वां विहाय हितमस्ति हि मादृशानां
तस्माद् गतिस्त्वमसि मे भगवन् दयालो ॥

हे कमललोचन ! हे दयालो ! कौन कौन से दुराचरण मैं ने नहीं किये हैं ! फिर भी आपने अनेक बार विपत्ति में मेरी रक्षा की है। हमारे जैसे पतितों का हितकारी आप के सिवा दूसरा कौन है ? इस लिए हे भगवन् हेदयालो एकमात्र तुम्हीं मेरे आधार हो।

॥ ५ ॥

स्नेहेक्षणेन लभते विभवं सुरेशः
पारं प्रयाति भवसागरतश्च पापी ।
सन्तापतप्तजनजीवनवारिदस्त्वं
तस्माद् गतिस्त्वमसि मे भगवन् दयालो ॥

आप की प्रेममयी दृष्टि से देवराज इंद्र स्वर्ग की संपत्ति पाते हैं और पापी भी इस संसाररूपी सागर से पार हो जाता है। आप संताप से तप्त प्राणियों के जीवन के लिए अमृत बरसाने वाले मेघ के समान हैं। अतः हे भगवन् ! हे दयालो ! तुम्हीं एकमात्र मेरा शरण (रक्षक) हो।

॥ ६ ॥

ग्राहाभिभूतचरणश्च गजेन्द्रमुख्यः
संत्रस्तनेत्रयुगलेन दिशो ददर्श ।
भक्तस्य तस्य जगदीश कृता सुरक्षा
तस्माद् गतिस्त्वमसि मे भगवन् दयालो ॥

ग्राह के द्वारा जिसके चरण पकड़े गये थे, हाथियों का नायक वह गजराज भयभीत नेत्रों से सभी दिशाओं की ओर देखा कि कोई मेरी रक्षा करे लेकिन उसे कोई रक्षक देखने में नहीं आया। हे जगदीश्वर! उस समय आपने ही उस भक्त की रक्षा की थी। इसलिए हे भगवन्! हे दयालो! तुम्हीं मेरे एक मात्र आधार हो।

॥ ७ ॥

नारायणेति विवशं सहसा वदन्तं
माता स्वपुत्रमिव रक्षसि वत्सलत्वात् ।
शीघ्रं जुगोप जगदीश सुरारिशत्रो
तस्माद् गतिस्त्वमसि मे भगवन् दयालो ॥

वत्सलता के कारण जैसे माता अपने शिशु को हर विपत्ति से बचा लेती है, उसी प्रकार मरणासन्न यमदूतों से भयभीत हुए विवशता से नारायण ऐसा अपने नाम को पुकारनेवाले अजामिल की आपने ही रक्षा की। इस लिए हे जगदीश हे दैत्यशत्रो हे भगवन् हे दयालो! तुम्ही मेरे एक मात्र आधार हो।

॥ ८ ॥

गोविन्द माधव हरे धृतसाश्रुनेत्रा
मां रक्ष पाण्डववधू सहसा जगाद ।
त्राता त्वया हि चकिता हरिणीव भीता
तस्माद् गतिस्त्वमसि मे भगवन् दयालो ॥

कौरवों की सभा में अपने को असहाय जानकर, हरिणी सी चकित और भयभीत हुई, पाण्डवों की पत्नी द्रोपदी की आंखों में आसू भर आये । वह निराधार होकर एका एक पुकार उठी । हे गोविन्द ! हे माधव ! हे हरे ! मेरी रक्षा करो । उस समय आपने ही उसकी रक्षा की थी । इसलिए हे भगवन् ! हे दयालो ! तुम्हीं मेरे एक मात्र अवलंबन हो ।

॥ ९ ॥

यो ना पठेदनुदिनं विगतप्रमादः
स्तोत्रं समाहितमना रघुनन्दनस्य ।
श्रीरामचन्द्रचरणे रतिमाप्नुयात् सः
सन्त्यज्य दुःखमखिलं लभते गतिं वै ॥

श्री रघुनाथ जी के इस उत्तम स्तोत्र का जो मनुष्य प्रतिदिन प्रमाद छोड़ कर एकाग्रमन से पाठ करेगा, तो अवश्य श्री राम जी के चरणो में उसकी प्रीति होगी । तथा दुःखों संपूर्ण से मुक्त होकर वह उत्तम गति को प्राप्त होगा ।

श्रीब्रह्मनमस्कारस्तवः

॥ १ ॥

आनन्दैकरसोऽतिसूक्ष्मगहनो दुर्बोध्यबोध्यश्च यो
दूराद्दूरतरस्तथा च निकटे सर्वेश्वरः संस्थितः ।
धाम्ना स्वेन सदा चराचरमिदं संभास्यते लीलया
भक्तानां भवरोगनाशनपरस्तस्मै नमः सर्वदा ॥

जो आनंदमय स्वरूप हैं, अत्यंत सूक्ष्म तथा गहन हैं, जो भगवद्विमुख लोगों के लिए दुर्बोध्य हैं तथा भक्ति के द्वारा सुगमता से जाने जाते हैं। ईश्वर विमुख के लिए जो दूर बहुत और ज्ञानियों के लिए सदा पास में रहते हैं। अर्थात् विद्वान् पुरुष सदा अपने हृदय में स्थित ईश्वर को जानते हैं। लीला से ही जो इस संपूर्ण संसार को प्रकाशित करते हैं। तथा अपने भक्तों के भवरोग को नाश करने में तत्पर रहते उन ईश्वर को मैं सदा नमस्कार करता हूँ।

॥ २ ॥

कालः कर्षति मानवान् प्रतिदिनं दीर्घात् करात् दूरतः
पृथ्वी धारयति प्रपञ्चमखिलं खेदं विना सर्वदा ।

यस्याज्ञामनिशं दधाति हुतभुग् वैश्वानरस्तेजभृत्
तं देवं प्रणमामि शुद्धमनसा देवाधिदेवं विभुम् ॥

जिस ईश्वर के संकेत से प्रवल काल अपनी विशाल भुजाओं से दूर से ही प्राणियों को खींच लेता (अंतकरता) है। यह धरा बिना किसी दुःख के सर्वदा संपूर्ण संसार को धारण करती है। तेज को धारण करने वाले अग्निदेव जिसकी आज्ञा को निरंतर पालन करते हैं। जो देवों का भी देव है एवं व्यापक है। उस देवाधिदेव को शुद्ध मन से मैं प्रणाम करता हूँ।

॥ ३ ॥

संजाता बहवो विशुद्धमतयो व्यासादयः सूरयो
वक्तुं तेऽपि न पारयन्ति चरितं विश्वम्भरस्य प्रभोः।
यस्यादिं न विदुर्मनुष्यमुनयो वेदाः समस्तास्तथा
यस्माज्जातमिदं प्रपञ्चमखिलं तस्मै नमः सर्वदा ॥

विशुद्ध बुद्धिवाले व्यासादि बहुत से महान् पुरुष हो चुके हैं, परन्तु वे भी भगवान् विश्वंभर के चरित का पार नहीं पा सके। जिसका आदि मनुष्य मुनिगण तथा समस्त वेद भी नहीं जान सके तथा जिससे यह अखिल चराचर जगत उत्पन्न हुआ है, उस परमेश्वर को मैं सदा नमस्कार करता हूँ।

॥ ४ ॥

यं वाणीचतुराननादिमुनयः पश्यन्ति सत्त्वस्थिता
रागादीनपहाय शुद्धमनसा ध्यायन्ति यं सूरयः।

नान्यो यस्य समः समस्तभुवने तस्माद् विशेषः कुतः
कर्ता यो भुवनत्रयस्य भगवान् तस्मै नमः सर्वतः ॥

सरस्वती, ब्रह्मा और मुनिगण शुद्ध सत्त्वगुणों में स्थित जिस परमतमा के दर्शन करते हैं। तथा रागादि विकारों को छोड़ कर पवित्र मन से विद्वान् लोग जिसका ध्यान करते हैं, जिसकी समताकरनेवाला अखिल ब्रह्माण्ड में दूसरा कोई नहीं है। फिर विशेष तो हो ही कैसे सकता है? तथा जो तीनों लोकों का कर्ता है, उस ब्रह्म को मैं सभी तरफ से नमस्कार करता हूँ।

॥ ५ ॥

सीताशोभितदिव्यकान्तिवपुषं सिंहासने संस्थितं
नीलाम्भोजकलेवरं मुनिवरैः संसेवितं सर्वदा।
कर्णान्तायतलोचनं हरिहरस्तोत्रैः सदा संस्तुतं
पृथ्वीभारहरं परं रघुवरं श्रीरामचन्द्रं भजे ॥

जो श्रीसीताजी से सुशोभित है तथा जिनके शरीर की कांति दिव्य है। जो नील कमल के समान सुंदर शरीर वाले हैं। एवं मुनियों से सतत सेवित हैं। कान का स्पर्श करने वाले जिनके विशाल नेत्र हैं। विष्णु और शिव स्तोत्रों से जिनका सदा स्तवन करते हैं। जो दिव्य सिंहासन पर विराजमान हैं। उन पृथ्वी का भार उतारनेवाले, रघुकुल में श्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी को मैं भजता हूँ।

॥ ६ ॥

सत्यं सत्यपरायणं समरसं सत्यात्मकं राघवं
सत्ये सन्निहितं सनातनपदं संसारशोकापहम् ।
शान्तं सर्वगतं सरोजनयनं सर्वेश्वरं सुन्दरं
श्रीरामं कमलापतिं सुखकरं वन्दे गुरूणां गुरुम् ॥

तीनों कालो में जिनकी सत्ता विद्यमान रहती है। सत्य के रक्षक, एकरस, सत्य में विद्यमान रहनेवाले, जिनका पद शाश्वत है, जो संसार के शोक को निर्मूल करनेवाले हैं। शान्तस्वरूप, सर्व व्यापक, कमल के समान नेत्रवाले, संपूर्ण लोकों के ईश्वर, सुन्दर स्वरूपवाले, अपने भक्तों को सुख-प्रदान करने वाले तथा जो गुरुओं के भी गुरु हैं, उन श्रीरामजी लक्ष्मीपति का मैं वन्दन करता हूँ।

॥ ७ ॥

उत्फुल्लारुणपङ्कजांघ्रियुगलं ध्यायन्ति यद् योगिनः
संसाराब्धितरङ्गशोकमकरात् त्राणं वरं सुन्दरम् ।
वेधःशम्भुसुरेन्द्रसूर्यशशिभिः सम्पूजितं सर्वदा
सीतासेवितसन्ततं श्रुतिनुतं तस्मै नमः सर्वदा ॥

खिले हुए लाल कमल के समान जिनके चरणयुगल का योगीलोग ध्यान करते हैं। जो संसाररूपी समुद्र की तरंगों में रहनेवाले शोकरूप मगर से रक्षा करने के लिए श्रेष्ठ तथा सुन्दर कवच है। ब्रह्मा, शंकर, इन्द्र, सूर्य तथा चंद्र द्वारा जो निरंतर पूजित है तथा जो चरण श्रीसीताजी से निरंतर

सेवित है। एवं जो चरण श्रुतियों से वंदित है, उस चरणयुगल को मैं सदा नमस्कार करता हूँ।

॥ ८ ॥

प्राणान् प्राणवतां च विश्वमखिलं ब्रह्माण्डकोटिं तथा
पृथ्वीं यः सततं बिभर्ति भगवान् श्रद्धामयो निष्कलः।
कीर्तिर्यस्य विभाति सर्वभुवने सर्वस्य दोषापहा
सन्तप्तामृतवर्षिणे भगवते तस्मै नमः सर्वदा ॥

जो परमात्मा संपूर्ण प्राणियों के प्राणों को अखिल विश्व को, अनंत कोटि ब्रह्माण्ड को तथा इस पृथ्वी को धारण किये हुए हैं और पालन भी करते हैं। जो श्रद्धामय हैं, तथा अणु से भी अणु हैं, जिनकी कीर्ति सभी भुवनों में फैली हुइ है एवं जो प्राणी मात्र के दोषों को हरण करनेवाले हैं तथा संताप से तप्त प्राणियो के लिए अमृत बरसानेवाले हैं उन भगवान को मैं सर्वदा नमस्कार करता हू।

॥ ९ ॥

यस्याज्ञामनिलो दधाति नितरां जीवस्य यज्जीवनं
तिष्ठन् धावति यः सदा सुरगणैर्वन्द्यो वरेण्यश्च यः।
नित्यं वै सविता स्वकार्यनिरतो यस्याज्ञया वर्तते
दुर्दर्शश्च निरस्त-सर्वकुहकस्तस्मै नमः सर्वदा ॥

प्राणीमात्र के जीवन का जो आधार हैं, वह पवन देव जिसकी आज्ञा को सदा पालन करते हैं। जो ईश्वर एक

जगह स्थित होते हुए भी दौड़ता है, अर्थात् ईश्वर एक जगह होते हुए भी सभी जगह है। जो देवताओं से सेवित है तथा वरण करने योग्य है। जिसके आदेश से सूर्य निरंतर अपने कार्य में तत्पर रहता है। जिसे इन पार्थिव आँखो से कोई नहीं देख सकता। जिसने अपने तेज से संपूर्ण अंधकार (अज्ञान) को नष्ट कर दिया है, उस परमात्मा को मैं सर्वदा नमस्कार करता हूँ।

॥ १० ॥

सन्तुष्टाः सततं तपःस्थितधियः केचित् फलत्यागिनः
केचिद् भक्तिमयेन शान्तमनसा शृण्वन्ति ते सत्कथाम्।
निर्धूताखिलकल्मषाश्च नितरामर्चन्ति केचित् तथा
आयुर्मे च गतं कृतं न सुकृतं स्तोत्राञ्जलिर्गृह्यताम् ॥

कितने लोग ऐसे हैं, जो तपस्या में स्थिर बुद्धिवाले होते हैं, लेकिन फल की इच्छा नहीं रखते। कितने भक्त आप की भक्ति युक्त शांत मन से आपकी पवित्र कथा सुनते है। तथा ऐसे भी कितने लोग हैं जिनके सभी पाप नष्ट हो चुके हैं, वे आपकी पूजा में सतत लगे रहते हैं। लेकिन मैने अभी तक कोई सुकृत नहीं किया और आयु करीब करीब बीत चुकी हैं। बस केवल इन स्तोत्रों की अंजलि आपको समर्पित करता हूँ—इसे आप ग्रहण करें।

(११)

वाक् प्राकृता न मम तोषयितुं भवन्तं
दिव्यं सनातनमगोचरमिन्द्रियाणाम् ।
नूनं कृपाममृतवर्षिकटाक्षपातं
धत्से च हेतुरहितं निजकिंकरेषु ॥

मेरी सामान्य वाणी आप को प्रसन्न करने में समर्थ नहीं हो सकती, क्यों कि आप प्रकृति से परे दिव्य हैं, शाश्वत हैं तथा इन्द्रियों के अविषय हैं। लेकिन निश्चय ही आप स्वार्थ के विना भी निज जनों पर कृपा तथा अमृत वरसानेवाली दयादृष्टि रखते हैं।

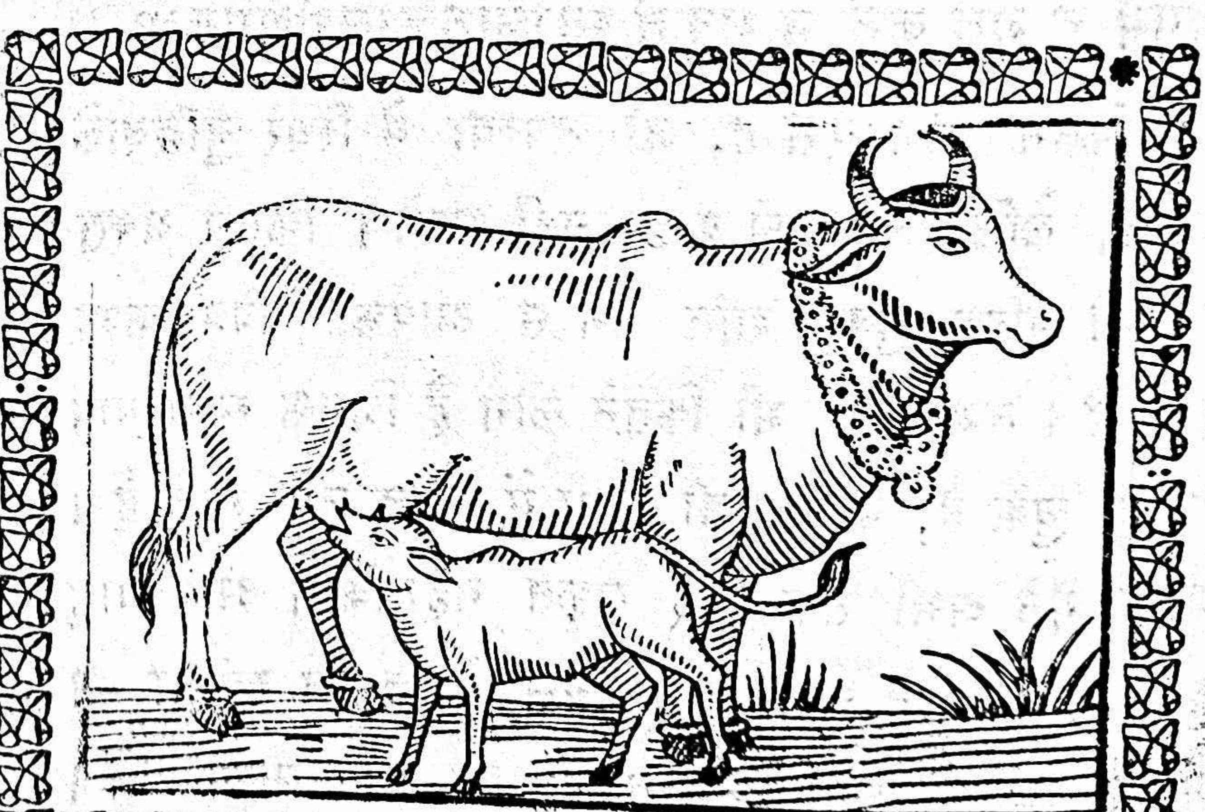

अपराधक्षमापनस्तोत्रम्

॥ १ ॥

नमामि ते राम सुपादपङ्कजं
पदाब्जरेणुं शशिमौलिवन्दितम् ।
नमामि भूयः करुणानिधिं परं
विरक्तमुख्यैर्हृदि भावितं सदा ॥ १ ॥

हे राम जिन चरण कमलों की रज शंकरजी द्वारा वंदित है, तुम्हारे उन सुन्दर कमल के समान चरणों को मैं नमस्कार करता हूँ । जो विरक्त पुरुषों के द्वारा हृदय में ध्यान किये जाते हैं, उन करुणासागर भगवान् को मैं बारंबार नमस्कार करता हूं ।

॥ २ ॥

पुनः पुनस्तं भुवनैकवन्दितं
स्वयंप्रकाशं पुरुषं परात्परम् ।
अनन्तलावण्यमयं मनोहरं
नमामि रामं तडिदाभवाससम् ॥ २ ॥

जो संपूर्ण भुवनो में एकमात्र वंदित है, स्वयं प्रकाशस्वरूप परात्पर ब्रह्म हैं । तथा अनन्त लावण्यमय मनोहर जिनका रूप

है, जो बिजली के समान दिव्य पीताम्बर से सुशोभित हैं। उन राम को मैं नमस्कार करता हूँ।

॥ ३ ॥

पदाब्जभक्तेर्ननु ये पराङ्मुखाः
कुलेन वित्तेन च मानिनस्तथा ॥
विमोहिता इन्द्रियसक्तबुद्धयो
व्रजन्ति शान्तिं नहि कोटियत्नतः ॥ ३ ॥

जो ईश्वर के चरण कमलो की भक्ति से विमुख और कुल तथा धन के अभिमान से मतवाले होते हैं, वे मोह के कारण इन्द्रियों के सुख में ही आसक्त बुद्धिवाले हैं, शांति के लिए करोड़ो उपाय करने पर भी उन्हें शांति नहीं मिलती।

॥ ४ ॥

विशुद्धबुद्धिर्गतमानमत्सरः
सुखेषु दुःखेष्ववमानमानयोः ।
विकारशून्यो गुणदोषवर्जितो
निवेशितात्मा त्वयि भक्तिमाप्नुयात् ॥ ४ ॥

लेकिन जिस की बुद्धि विशुद्ध है, मान और मत्सर से जो रहित है तथा जो सुख और दुःख में मान अपमान में समभाव रखता है। गुण और दोषों से रहित एवं सभी प्रकार के विकारो से शून्य तुम्हारे में ही जिसने अपने

आत्मा को समर्पित कर दिया हैं। वही आपकी अलभ्य भक्ति प्राप्त करता हैं।

॥ ५ ॥

अनन्तकीर्तिं करुणाकरं परं
सुमन्दहासं कलभाषिणं तथा।
विशालबाहुं जनकात्मजाप्रियं
नमामि रामं भवरोगभेषजम् ॥ ५ ॥

जिनकी अनंत कीर्ति है, जो परम दयालु हैं, मन्दहास-वाले मधुर संभाषण करनेवाले हैं तथा जिनकी विशाल भुजाएँ हैं, जो जानकीजी को प्राणों के समान प्रिय हैं एवं जन्म मरणरूप संसार के रोग को मिटाने के लिए अमोघ औषध के समान हैं, उन रामजी को मैं नमस्कार करता हूँ।

॥ ६ ॥

दुरासदं ते किल चेष्टितं प्रभो !
सुरासुरैश्च श्रुतिभिश्च योगिभिः।
कुतः पुनर्बद्धजनो गुणैर्हरे
भवेदलं त्वां कथमीश बोधितुम् ॥ ६ ॥

'हे प्रभो। आप कब क्या करना चाहते हैं' इस बात को देव असुर, श्रुतियाँ तथा योगी लोग भी नहीं जानते हैं। हे रे, हे ईश प्रकृति के गुणो से बंधा हुआ मनुष्यतो आपको जानने में समर्थ हो ही कैसे सकता है ?

॥ ७ ॥

अवाप्य रामस्य पदारविन्दयोः
सुदुर्लभं देहमिमं हि भूतले ।
प्रीतिं न दध्याद् भवदुःखनाशिनीं
स आत्मघातो मुनिभिः प्रकीर्तितः ॥ ७ ॥

जो इस संसार में दुर्लभ मनुष्यशरीर पाकर संसार के दुःखो को निर्मूल करनेवाली, श्रीरामजी के चरणों में प्रीति नहीं करता, वह मुनियों द्वारा आत्मघाती कहा गया है ।

॥ ८ ॥

हे रामचन्द्र रघुनाथ दयैकसिन्धो
हे सर्वरूप भरताग्रज दीनबन्धो ।
किं वस्तु चास्ति भुवनेश्वर दुर्लभं ते
यत्तेऽर्पयामि भगवन् परिपूर्णकाम ॥ ८ ॥

हे रामचन्द्रजी ! हे रघुकुल के स्वामी दया के एकमात्र स्वरूप हे सर्वरूप भरताग्रज, हे दीन जनों के हितकारी चराचर जगत के ईश्वर हे पूर्णकाम परमेश्वर कौन ऐसी वस्तु आपके लिए संसार में अप्राप्य है ? जिसे मैं आप को अर्पण करूँ ?

॥ ९ ॥

अस्त्यम्बुजाक्ष मम किं नहि यत्त्वदीयं
सद्भावग्राहक सुरासुरपूज्यपाद ।

दुःखेषु मग्नमनसा स्मरणात् त्वदीयाद्
बद्धाञ्जलेश्च नमनान्नहि किञ्चिदन्यत् ॥९।

हे कमलनयन सच्चे भावो को स्वीकारने वाले, देवताओं और असुरों से पूजित, मेरी कौनसी ऐसी वस्तु है, जो आपकी नहीं हो ? दुःख में डूबा हुआ मन से आप का स्मरण करना और दोनों हाथ जोड़कर नमस्कार करने के सिवा मेरा कुछ भी नहीं है।

॥ १० ॥

कामारिकार्मुकसुरासुरमध्यशीघ्रं
लीलाविभञ्जिनमहो धृतचापबाणम् ।
शोकोपशान्तिकरणं वरदं करन्तं
नूनं विधास्यसि कदा मम मस्तके त्वम् ॥

धनुष बाण धारण करने वाले, देवताओं और असुरों के बीच शंकर जी के धनुष को शीघ्र भंग करनेवाले, तथा भक्तों के शोक को शान्त करनेवाले उस वरद करकमल को मेरे मस्तक पर कब रखेंगे ?

॥ ११ ॥

वज्राङ्कुशादिशुभलक्षणलक्षितं वै
तद् भिन्नभिन्नफलधर्मसमन्वितञ्च ।
उत्फुल्लवारिजनिभं श्रुतिभिश्च ज्ञेयं
ब्रह्मादिभिर्मुनिवरैः सततञ्च सेव्यम् ॥

निश्चय ही जो वज्र, अंकुश आदि शुभ लक्षणों से युक्त है तथा अलग अलग फल और धर्मवाला है। तुरंत के खिले हुए कमल के समान तथा वेदो के द्वारा जानने योग्य एवं ब्रह्मा आदि सेवित है।

॥ १२ ॥

संसारसागरसुदुस्तरदिव्ययानं
सम्पूर्णसिद्धिसुखशान्तिकरं वरेण्यम् ।
अद्यापि यस्य मुनयः प्रगृणन्ति कीर्तिं
पश्यन्ति भक्तपुरुषास्तवपादयुग्मम् ॥

जो दुस्तर संसार सागर से पार होने के लिए दिव्य जहाज के समान है तथा सभी प्रकार की सिद्धियों को सुख और शांन्ति प्रदान करने वाला एवं आश्रय लेने योग्य है। आज भी जिसकी कीर्ति को मुनिलोग गान करते हैं। जिस चरण युगल के दर्शन भक्त लोग करते हैं।

॥ १३ ॥

हित्वातिदुर्लभसुखं त्रिदिवस्य दिव्यं
योगे स्थिता यदनिशं सनकादिसिद्धाः ।
ध्यायन्ति यत् सुखकरं भवदुःखहारि
ध्येयं परं प्रणतबन्धहराङ्घ्रियुगमम् ॥

अति दुर्लभ स्वर्ग के सुख को छोड़ कर योग में स्थित सनकादि सिद्धगण जिसका ध्यान करते हैं। जो सभी प्रकार के सुखप्रदान करनेवाला एवं संसार के दुःखो को मिटानेवाला है। सर्वश्रेष्ठ, ध्यान करने योग्य वह चरणयुगल शरणागतों के बंधन को हरण करने वाला है।

॥ १४ ॥

यत्पादपद्मसुजला किल पापहन्त्री
गङ्गाऽभवत् सकललोकविशेषवन्द्या ।
यस्य प्रसादममलं मुनयश्च सर्वे
वाञ्छन्ति भोगविमुखा जितषड्विकाराः ॥

जिस चरण कमल से निकली हुई, पवित्र जलवाली सभी तरह के पापों को नष्ट करने वाली गंगा सभी लोकों की पूजनीय बन गई तथा सभी प्रकार के भोगों से अलग कामादि छः विकारो को जीतनेवाले सभी मुनिगण जिसकी निर्मल कृपा की अभिलाषा रखते हैं।

॥ १५ ॥

रत्नांशुशोभितमहार्घसुरादिवन्द्ये
सिंहासने स्थितमनन्तशिवादिसेव्यम् ।
स्तोत्रैः स्तुवन्ति सततं मुनयश्च सिद्धा
जन्मादिभीतिहरणं परमं पवित्रम् ॥

"जो चरण युगल" रत्नों की किरणों के प्रकाश से सुशोभित एवं अत्यधिक मूल्यवान तथा सुरादिकों से वंदित सिंहासन पर विराजमान है। मुनिगण तथा सिद्धलोग जिसकी निरंतर स्तोत्रों से स्तुति करते हैं। जन्म मरण आदि दुःखों को हरण करने वाला तथा जो परम पवित्र है।

॥ १६ ॥

गोविप्रवृन्दशरणं किल सन्निधानं
मायाविकारपरिवर्जिततीर्थभूतम् ।
संसाररोगहरणं वरमौषधं यद्
द्रक्ष्यामि देववर तन्नु कदाङ्घ्रियुग्मम् ॥

गौ ब्राह्मण समुदाय का एकमात्र आधार तथा सत् पुरुषों की जो सर्वोत्तम निधि है। जो माया के सभी विकारों से पृथक तथा तीर्थस्वरूप है एवं जन्ममरणरूप संसार के रोगों को मिटाने के लिए जो उत्तम औषध के समान है। हे देवश्रेष्ठ आप का वह चरणयुगल मैं कब देखूँगा?

॥ १७ ॥

छिन्दन्ति कर्मकठिनग्रहग्रन्थिजालं
कुर्वन्ति ये रघुवरस्य कथारतिं वै ।
धन्यास्त एव पुरुषाः खलुभक्तिमन्त-
स्तेषां कुलञ्च भुवि धन्यतरञ्च जन्म ॥

जो श्रीरघुनाथ जी की कथा में अनुराग रखते हैं, वे कर्मों के कठिनग्रहों के समान दुःखदाई ग्रन्थियों के जाल को निर्मूल कर देते हैं। भक्ति से युक्त वे पुरुष निश्चय ही धन्य हैं तथा उनका कुल भी धन्य है।

॥ १८ ॥

उक्तं मया खलु दुरुक्तवचो बिमोहा-
दापद्गतेन परिनष्टविवेकशक्तया।
माता पिता च जगतां जनरक्षकस्त्वं
क्षन्तव्यमीश रघुनन्दन पुष्कराक्ष ॥

हे रघुनन्दन! हे कमलनयन! अतिपीड़ा के कारण मेरी बुद्धि नष्ट हो चुकी थी। शारीरिक मोह के कारण मैंने आप को जो कठोर शब्द कहे हैं, उन्हें आप क्षमा करने योग्य हैं। क्योंकि आप ही संपूर्ण जगत् के माता पिता हैं तथा रक्षक भी आप ही है।

॥ १९ ॥

माता शिशुं प्रति तु कुप्यति नात्र शङ्का
दण्डं ददाति च धरा विविधैः स्वरूपैः।
हे दीनवत्सल कृपाकर रामचन्द्र
भक्तेषु ते रघुपते नहि रुक्षभावः ॥

माता तो अपने बच्चे पर कारणवश कभी क्रोध करती भी है, इसमें कोई संदेह नहीं है। तथा पृथ्वी भी

कंटकादि अनेक रूपों से विपरीत आचरणवालो को दंड देती है, लेकिन दीन जनों पर वत्सलभाव रखने वाले आप कृपा के आकर, हे रामचन्द्र जी। हे रघुकुल के स्वामी। भक्तों पर क्रोध करने की बात तो दूर रहो, उनके प्रति नीरसता या उपेक्षा का भाव भो आप का नहीं होता।

॥ २० ॥

श्रीराघवेन्द्रचरणाम्बुजसक्तबुद्धिः
स्तोत्रं सुमङ्गलमयं मनुजः पठेद्यः ।
तस्य प्रचण्डदुरितं सकलं निहन्ति
नूनं पदञ्च लभते रघुनन्दनस्य ॥

श्रीरामजी केचरण कमल में अनुरागवाला जो मनुष्य इस मंगलमय स्तोत्र का पाठ करता है, तो उसके संपूर्ण पाप समुदाय नष्ट हो जाते है तथा निश्चय ही वह रघुनाथजी का पद प्राप्त करता है।

श्री रामस्तवविंशतिः

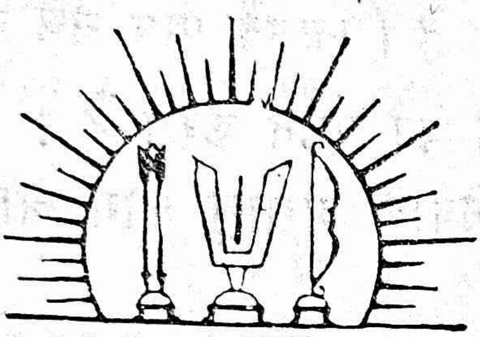

॥ १ ॥

दधार रूपं प्रकृतेः परं हरे !
सुरारिनाशाय च देवयाचितः ।
चकार लीलां भवबन्धनाशिनीं
सुधामयीं मङ्गलकारिणीं तथा ॥

हे प्रभो। देवताओं की प्रार्थना से आपने असुरों का विनाश करने के लिए प्रकृति से परे दिव्य विग्रह को ग्रहण किया। तथा संसार के बंधन को नष्ट करनेवाली तथा अमृतसमान मंगलप्रदान करने वाली लीलाओं का विस्तार किया।

॥ २ ॥

गृणन्ति गन्धर्वगणा गुणान् मुदा
पठन्ति नित्यं गतकल्मषा जनाः ।

अवाप्य देहं सुरलोकवन्दितं
गृहे प्रसक्ता न भजन्त्यसाधवः ॥

आनंदित होकर गंधर्वों का समुदाय निरंतर आप का गुणगान करता है। जिनके पाप नष्ट हो चुके हैं, ऐसे लोग आप के गुणो का पठन करते हैं। परंतु गृह सुख में ही आसक्त रहनेवाले असाधु लोग आप के चरणों से विमुख रहते हैं।

॥ ३ ॥

विहाय राज्यं पितुराज्ञया सुखं
विमातरं वाचमिमां हसन् भवान् ।
उवाच मातर्मम वाञ्छितं महत्
फलं त्वया दत्तमिदं न संशयः ॥

आप अपने माता पिता की आज्ञा से देवदुर्लभ सुख एवं राज्य को छोड़कर जब वनवास के लिए तैयार हो चुके थे, तब हंसते हुए विमाता कैकेयी से इस प्रकार बोले; हे माता ! तुमने तो हमारी इच्छा के अनुकुल ही यह आदेश दिया है।

॥ ४ ॥

तव प्रसादात् सुखदुःखमित्रतां
परस्य वैरं स्वजनस्य शीलताम् ।
वसन् वनेऽहं खलु वेदितास्मिता-
नतः परं किं मम मङ्गलं परम् ॥

तुम्हारी इस अनुकपासे ही वन में रहकर, निश्चय ही सुख और दुःख को, मित्रों की मित्रता को, शत्रुओं की शत्रुता को तथा स्वजनो को शीलता को जान सकूँगा। इससे उत्तम अवसर मेरे लिए दूसरा कौन हो सकता है?

॥ ५ ॥

सुखं जहासि स्वजनं जहासि वै
प्रियां जहासि प्रियतातमातरौ।
स्वभक्तकल्पद्रुमदीनरक्षिन्
जहासि सत्यं नहि संकटागतौ॥

सभी प्रकार के सुखों को आप त्याग कर देते हैं। समय आने पर स्वजनों का भी त्याग करते हैं तथा अपनी अभिन्न शक्ति श्रीजानकी जी को भी त्याग देते हैं किन्तु भक्तों के लिए कल्पवृक्ष के तुल्य, दीनजनों की रक्षा करने वाले आप महान् विपत्ति आने पर भी सत्य का त्याग नहीं करते।

॥ ६ ॥

धनुर्विमुक्तान् ननु ताञ्शिलीमुखान्
समीक्ष्य भीताः षिशिताशनास्तथा।
इतस्ततस्ते विलयं व्रजन्ति वै
तमः प्रभाते सवितुः करैर्यथा॥

आप के विशाल धनुष से छूटे हुए बाणों को देखकर राक्षस गण इधर उधर भागकर उसी प्रकार छिप जाते हैं, जैसे प्रातः कालीन सूर्य की किरणों के तेज से अंधकार विलीन हो जाता है।

(७)

विपत्तिसंक्रान्तजनोऽपि हे हरे
करोति नाम्नः स्मरणं यदा तदा।
पवित्रतीर्थाम्बु यथा हि कल्मषं
धुनोति सर्वं नहि संशयास्पदम्॥

हे हरे! दुख से घेरा हुआ भी जो मनुष्य तुम्हारे नाम का स्मरण करता है, तो वह संपूर्ण पाप को उसी प्रकार नष्ट कर देता है, जैसे पवित्र तीर्थ का जल संपूर्ण पापों को नाश कर देता है।

(८)

अनन्त लावण्यमयं मनोहरं
समीक्ष्य रुपं रघुनन्दनस्य तत्।
विमुक्तदोषाः सुरलोकवन्दिता
रमापतेर्लोकमयुर्हिराक्षसाः।

श्री रघुनाथ जी के अनंत लावण्यमय मधुर रूप के दर्शन से ही राक्षस निष्पाप हो चुके थे, इस लिए वे युद्ध में मरकर देवताओं से वंदित लक्ष्मीपति भगवान् विष्णु के उत्तम लोक को प्राप्त हुए।

(९)

नमो नमो धर्मभृते महात्मने
नमोऽनन्तदयैकसिन्धवे ।
नमो वरिष्ठाय जगद्धिताय ते
परात् परस्मै भगवन् नमोऽस्तुते ॥

धर्म को धारण करने वाले हे भगवन ! आप महापुरुष को मेरा बारंबार नमस्कार है । अनंत दया के समुद्र आप को नमस्कार है, नमस्कार है । जगत के एक मात्र हितकारक, ब्रह्मादि देवों से भी श्रेष्ठ आप को नमस्कार है । परात् पर परमात्मा आपको नमस्कार है ।

(१०)

त्रिविक्रमाय व्रतिने तपस्विने
महेशसेव्याय च सर्ववासिने ।
नमो नमस्ते जगदेकचक्षुषे
कपीन्द्रमित्राय च शेषशायिने ॥

वामन रूप धारण करने वाले, एवं तपस्वी वेष धारण करने वाले तथा शंकर जी से सम्यक प्रकार सेवित और सभी भूत प्राणियों के आत्मा रूप से हृदय में विराजमान, प्राणी मात्र को आनन्द प्रदान करने वाले आपको नमस्कार है, नमस्कार है । शेष शय्या पर शयन करने वाले, हे सुग्रीव के मित्र आप को नमस्कार है ।

(११)

अनन्तवीर्यामितबोधविग्रहः
स्वकीयतंत्रे स्वयमेव वर्तते ।
स देवदेवः पुरुषः परात्परः
श्री रामभद्रादिपदैः प्रबुध्यते ॥

जो अनंत शक्ति संपन्न अमित बोधमय विग्रह वाले हैं, जो स्वयं अपने शासन में रहने वाले हैं। तथा जो देवो के भी देव हैं एवं परात्पर पुरुष हैं, वे श्रीरामभद्रादि शब्दों से जाने जाते हैं।

(१२)

प्रभाव चेष्टागुणकर्मशक्तिभिः
सुरासुराणां महतां महत्तरः ।
त्वमादि मध्यान्त विकार वर्जितो
महीतले कैर्महिमावगम्यते ॥

आप अपने अपूर्व प्रभाव से, अज्ञात चेष्टाओ से तथा दिव्य गुणो' से देवताओं और असुरों से एवं महान पुरुषों से भी महान हैं। आप का न आदि है, न अन्त है और न कोई मध्य है। संपूर्ण विकारो से परे आप की महिमा को इस पृथ्वी पर कौन जान सकता है? ।

(१३)

उग्रैस्तपोभिश्च समृद्धिभिर्वा
दानेन किं वा च महाव्रतैर्वा ।
एतैर्भवेन्नैव कदापि भक्ति-
स्तस्मिंश्च नित्ये गुणदोषवर्जिते ॥

चाहे किसी प्रकार का दान क्यों न हो, अथवा धन से संपन्न हो तो भी क्या ? उग्र तप एवं महाव्रतों के पालन से भी क्या ? सभी प्रकार के विकारों से रहित उस परमेश्वर में सच्ची भक्ति उत्पन्न नहीं हो सकती ।

(१४)

तदेव सौभाग्यफलं हि रम्यं
शिवप्रदं कर्म तदेव सार्थम् ।
अमोघशक्ते करुणैकसिन्धो
प्रसन्नता येन भवेत् त्वदीया ॥

हे आपार शक्तिवाले । वही सौभाग्य का सुंदर फल है । तथा कल्याण प्रदान करने वाला सार्थक कर्म भी वही है, जिससे आप की प्रसन्नता हो ।

(१५)

परंपरा नाथ मनोरथानां
तरंगमालेव सरित्पतेश्च ।
असत्यताया अपि दुःखरूपा
न पूर्यते वै महतीयमिच्छा ॥

हे नाथ ! इच्छाओं को परंपरा का क्रम समुद्र को तरंगमालाओ के समान चालू रहता है । तथा ये कामनाएँ असत्य होने से दुःखरूप हैं । निश्चय ही यह कामना कभी पूर्ण नहीं होती है ।

(१६)

लवं सहायेन निमज्जतानां
तृणं प्रसिद्धिं लभते च लोके ।
निकाम कामप्रद दीनबन्धो
न किं सहायं शरणं भवेत्ते ॥

तिनका ने डूबते हुए का नाममात्र सहारा बनकर संसार में प्रसिद्धि पा ली । तो फिर संपूर्ण कामनाओं को प्रदान करने वाले हे दीनबन्धो । क्या आपकी शरण सहायक नहीं बन सकती ?

(१७)

स्फुरन् महारत्नकिरीटकुण्डलं
नृपेन्द्रमौलेर्मणिचुम्बितं पदम् ।
सदा प्रसन्नं सनकादिवन्दितं
रमापतिं राममहं सदा भजे ॥

जिन्होंने चमकते हुए अमूल्य रत्नों के किरीट कुंडल धारण किये हैं । तथा श्रेष्ठ राजाओं के मस्तक के मणियों से जिनके चरण पूजित हैं । जो सदा प्रसन्न रहते हैं तथा सनकादि ऋषियो से वंदित हैं, उन लक्ष्मीपति श्रीरामजी को मैं सदा भजता हूँ ।

(१८)

शुभं न तावन् मम दीनबन्धो
भवेन्न यावत् करुणाकटाक्षम् ।
न भूप्रदानं न धनप्रदानं
श्रीरामभक्तिं कुरु मे प्रदानम् ॥

हे दीनबन्धो ! जब तक आप की करुणादृष्टि मेरी ओर नहीं होगी, तबतक मेरा कल्याण नहीं हो सकता। न हमें पृथ्वी चाहिए न धन चाहिए। हे श्री राम जी! हमें आप अपनी भक्ति प्रदान कीजिये।

(१९)

सौन्दर्य सिन्धोऽखिलदीनबन्धो
श्रीराम राजेश्वर कान्तिकान्त ।
संसारसिन्धौ पतितन्त्वगाधे
मां रक्ष दीनप्रतिपाल जिष्णो ॥

हे सौन्दर्यनिधे, हे दीनो के हितकारी, अपनी अलौकिक कांति से सुशोभित., हे श्री राम जी! हे राजराजेश्वर, विजयी शिरोमणि, हे दीनो के रक्षक ! इस अगाध संसार रूपी समुद्र में डूबते हुए मुझ दीन की रक्षा कीजिए।

(२०)

शौरे प्रपन्नप्रतिपाल भूमन्
सीतापते शान्त सरोरुहाक्ष ।

कूटस्थ योगीश शरण्य विष्णो
मां पाहि पाहि प्रणतार्तबन्धो ॥

शरणागतों की रक्षा करने वाले, हे शौरे ! हेभूमन्, हेसीतापते ! हेशान्तमूर्ति हे कमलनयन ! । हेनिर्विकार स्वरूप ! हे योगीश ! हे प्राणीमात्र के आश्रयस्वरूप ! हे हरे ! हे शरणागतों दुःखियों के बन्धु, मेरी रक्षा कीजिए मेरी रक्षा कोजिए ।

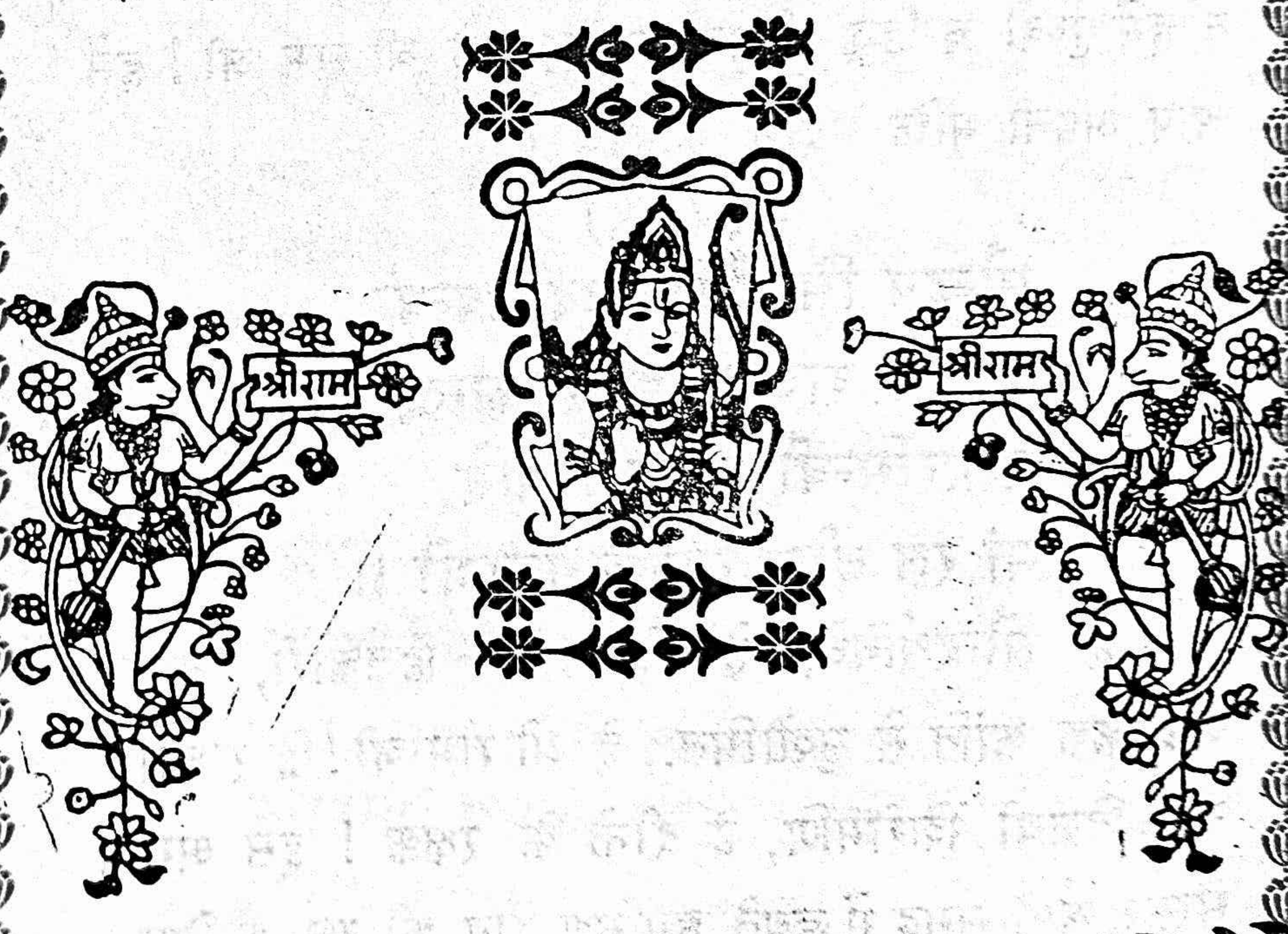

श्रीरघुपत्यष्टकम्

॥ १ ॥

अमरशेषगणेशसुसेवितं
विधिमहेशधनेशसुसंस्मृतम् ।
त्रिविधतापहरं हरवन्दितं
रघुपतिं सुखदं सततं भजे ॥

जो देवताओं से, शेषजी से तथा गणेशजी से सम्यक प्रकार से सेवित हैं । ब्रह्मा, शंकर तथा कुबेर जिनका सदा स्मरण करते हैं । जो तीनों तापों को हरने वाले हैं एवं शंकर द्वारा बन्दित हैं, सुख प्रदान करने वाले, उन रघुकुल के स्वामी को मैं निरंतर भजता हूँ ।

॥ २ ॥

प्रियकरं स्वजनस्य जनार्दनं
परमसुन्दरमायतलोचनम् ।
चरणसंश्रितशोकहरं परं
रघुपतिं सुखदं सततं भजे ॥

जो अपने भक्तों का प्रियकरने वाले हैं एवं त्रिलोकसुन्दर हैं, जिनके अत्यंत सुन्दर और विशाल नेत्र हैं तथा अपने आश्रितजनों के शोक को हरण करने वाले हैं । सुख प्रदान करने वाले, उन रघुकुल के स्वामी को मैं निरंतर भजता हूँ ।

॥ ३ ॥

क्षितिपतिं द्युपतिं क्षितिजापतिं
त्रिभुवनस्य पतिश्च रमापतिम् ।
सुरपतिं शरणागतरक्षकं
रघुपतिं सुखदं सततं भजे ॥

जो इस पृथ्वी के मालिक हैं तथा स्वर्ग के स्वामी हैं एवं जानकी जी के सर्वस्व हैं। जो तीनों लोकों के पति तथा लक्ष्मी के पति हैं, उन सुख प्रदान करने वाले रघुकुल के स्वामी श्री राम जी को मैं निरंतर भजता हूँ।

॥ ४ ॥

अलिकुलावलिसुन्दरकुन्तलं
कनककुण्डलशोभितमाननम् ।
मणिकदम्बकिरीटसुशोभितं
रघुपतिं सुखदं सततं भजे ॥

भमरों की पंक्ति के समान जिन के सुंदर काले बाले हैं तथा सुवर्ण कुण्डल से जिनका मुखारविंद सुशोभित है। जो मणियों के समूह से देदीप्यमान मुकुट से रमणीय लगते हैं, अपने भक्तों के सुख प्रदान करने वाले, उन रघुकुल के स्वामी श्रीराम जी को मैं निरंतर भजता हूँ।

॥ ५ ॥

परमकारुणिकं जगदीश्वरं
सकललोकधरञ्च धनुर्धरम् ।

गगनवद्बहिरन्तरसंस्थितं
रघुपतिं सुखदं सततं भजे ॥

जो परम दयालु हैं तथा संपूर्ण जगत के ईश्वर हैं। जो अखिल लोकों को धारण किये हुए हैं तथा धनुष को धारण करने वाले हैं एवं आकाश के समान सभी प्राणियों के अंदर और बाहर स्थित हैं, उन सुख प्रदान करने वाले रघुकुल के स्वामी को मैं निरन्तर भजता हूँ।

॥ ६ ॥

प्रकृतिपारमजं जनरञ्जनं
अघविनाशकरं करुणाकरम् ।
प्रलयशेषमनन्तमगोचरं
रघुपतिं सुखदं सततं भजे

जो प्रकृति से परे, अजन्मा और अपने भक्तों को आनंद देनेवाले हैं। जो पापों को नाश करने वाले और करुणा के सागर हैं तथा जो प्रलयकाल में भी अपने स्वरूप में स्थित रहते हैं, जो अनंत और अगोचर हैं, सुख प्रदान करने वाले उन रघुकुल के स्वामी को मैं निरन्तर भजता हूँ।

॥ ७ ॥

जनकजार्चितपादसरोरुहं
धरणिभारहरश्च युगे युगे।
विविधरूपधरं रघुनन्दनं
रघुपतिं सुखदं सततं भजे ॥

श्री जानकी जी द्वारा जिनके चरण कमल पूजित हैं तथा जो हरेक युग में पृथ्वी का भार उतारने के लिए विविध रूप धारण करते हैं। भक्तजनों को सुख प्रदान करने वाले, उन रघुकुल के स्वामी श्री रामजी को मैं निरन्तर भजता हूँ।

॥ ८ ॥

अहह नाथ गतं मम जीवनं
जगदिदं न जहाति च मे मनः।
तदपि वाञ्छति ते चरणे रतिं
निजजनं जगदीश्वर रक्षमाम् ॥

हे नाथ ! अत्यंत दुःख की बात है, मेरा जीवन तो बीत चुका है और मेरा मन अब भी संसारिक सुखों से विरत नहीं होता। इस पर भी आप के चरणों की भक्ति चाहता है। हे जगदीश्वर! मुझ दास की रक्षा कीजिए।

॥ ९ ॥

दुरितदोषहरं सुखदं महत
रघुवरस्य परं शुभमष्टकम्।
पठति यो मनुजः करुणानिधे-
र्व्रजति धामशिवादिनमस्कृतम् ॥

पाप संबंधित दोषों को हरने वाला तथा अलौकिक सुख प्रदान करने वाला, करुणा के समुद्र श्रीरामजी के इस पवित्र अष्टक का जो मनुष्य पाठ करता है, वह शंकर आदि से वंदित भगवान के उत्तम धाम को प्राप्त होता है।

प्रणामाञ्जलिः

॥ १ ॥

अमलं कमलेन समं चरणं
शिवशेषगणेशदिनेशपरम् ।
कलिकल्मषदोषहरं दहरं
प्रणमामि सदा भवभीतिहरम् ॥

निर्मल कमल के समान जिनके चरण हैं, शंकर, शेष, गणेश तथा सूर्य से भी जो श्रेष्ठ हैं। कलिकाल के पाप जन्य दोषों को हरण करने वाले हैं एवं जो दहर स्वरूप (अत्यंत सूक्ष्म) हैं। जो संसार के जन्म मरण रूपभय को मिटाने वाले हैं, उन प्रभु को मैं सदा नमस्कार करता हूँ

॥ २ ॥

धृतधर्ममधर्मविनाशकरं
स्मितभाषिणमात्मनिवासकरम् ।
युगकुण्डललोलकपोलछविं
परमस्तकभूधरकालपविम् ॥

जो धर्म को धारण करने वाले और अधर्म को नाश करनेवाले हैं एवं मंद हास के साथ बोलने वाले तथा प्राणी मात्र के आत्मा में निवास करनेवाले हैं। दोनों कानों

के कुंडलों के हिलने से जिनके कपोल की कमनीयता अति सुंदर लगती : है। जो शत्रुओं के मस्तकरूप पर्वत को दलित करने के लिए कालरूपी वज्र हैं।

॥ ३ ॥

तडिदाभमनोहरचीरधरं
सुखदं वरदं त्रयतापहरम्।
द्युतिसान्द्रपयोदसमं शुभगं
मनसा वचसा प्रणमामि सदा॥

जो बिजली के समान देदीप्यमान वस्त्र धारण किये हैं, सघन नील-मेघ के समान जिनके शरीर की सुन्दर कांति है। जो सभी प्रकार के सुख और अभीष्ट प्रदान करने वाले हैं तथा तीनों तापों को हरण करने वाले हैं, उन श्रीराम जी को मैं मन वचन से प्रणाम करता हूँ।

॥ ४ ॥

जगतीतलभारहरञ्च परं
सुमुखं कमलासनदुःखहरम्।
श्रुतिसारमनन्तमबाधगतिं
प्रणमामि सदा भवभीतिहरम्।

जो पृथ्वी के भार को हरण करने वाले हैं तथा प्रकृति आदि के विकार से रहित हैं। जिनका सुन्दर

मुखारविंद है तथा जो ब्रह्माजी के दुःख हरण करने वाले हैं। जो वेदों के सार हैं, अनंत हैं एवं जिनकी गति अबाधित है, जो संसार के जन्म मरण रूप विपत्ति को मिटाने वाले हैं, उन श्रीरघुनाथजी को मैं सदा प्रणाम करता हूँ।

॥ ५ ॥

जगदीशमनाथसनाथकरं
सुरशत्रुसमूहविनाशकरम्।
रघुनन्दनमारतशोकहरं
प्रणमामि सदा भवभीतिहरम्।

जो जगत के एकमात्र ईश्वर हैं, अनाथजनोंको सनाथ करने वाले हैं देवताओं के शत्रु असुरों को विनाश करने वाले हैं तथा रघुकुल को आनंद देनेवाले एवं आर्त जनों का शोक हरने वाले हैं। संसार के जन्म मरण रूप भय को दूर करने वाले उन श्री राम जी को मैं सदा प्रणाम करता हूँ।

॥ ६ ॥

अनवद्यमगोचरमीशमजं
प्रणवं जनमोहविनाशकरम्।
भवतापहरं शरचापधरं
प्रणमामि सदा भवभीतिहरम्॥

जो सभी प्रकार के दोषों से मुक्त हैं, इंद्रियों से परे तथा प्राणी मात्र के ईश्वर हैं। तथा जो प्रणव स्वरूप हैं एवं भक्तों के मोह को विनाश करनेवाले हैं, संसार के तापों को हरनेवाले एवं धनुष बाण धारण करने वाले हैं। जन्म मरणरूप संसार के भय को हरण करनेवाले उन रघुनाथजी को मैं सदा प्रणाम करता हूँ।

॥ ७ ॥

धृतचापवरं क्षितिपालपरं
मुनिमानसमन्दिरवासकरम्।
भववारिधिपोतमपारबलं
प्रणमामि सदा भवभीतिहरम् ॥

जो उत्तम धनुष धारण किये हुए हैं तथा राजाओं में श्रेष्ट हैं, जो मुनियों के मनरूपी मंदिर में निवास करने वाले हैं एवं संसार रूप सागर को पार करने के लिए जो सुदृढ जहाज के समान हैं। जिनके बल का कोई माप नहीं है। संसार के जन्म मरण रूप भय को हरने वाले, उन श्री राम जी को मैं सदा प्रणाम करता हूँ।

॥ ८ ॥

गिरिजापतिमानसवासकरं
शरणागतशोकविनाशकरम्।

परमीशमनन्तमनन्तगुणं
प्रणमामि सदा भवभीति हरम् ॥

जो श्रीपार्वतीजी के स्वामी शंकरजी के मनरूपी मंदिर में निवास करनेवाले हैं तथा शरणागतों के शोक को हरण करने वाले हैं। जो सर्व श्रेष्ठ हैं, अनंत गुण वाले हैं। तथा संसार के भय को दूर करने वाले हैं, उन श्री रामजी को मैं सदा नमस्कार करता हूँ।

॥ ९ ॥

रजनीचरवृन्दविनाशकरं
दुरितान्तकमात्मनिवासकरम्।
शरणं सचराचरविश्वधरं
प्रणमामि सदा भवभीतिहरम्।

जो राक्षसों के समुदाय को नाश करने वाले हैं तथा पापों को विनाश करने वाले एवं प्राणी मात्र की आत्मा में निवास करने वाले हैं। जो सभी के आधार और चराचर विश्वको धारण करने वाले हैं। जन्म–मरण रूप संसार के भय को हरण करने वाले, उन श्रीराम जी को मैं प्रणाम करता हूँ।

॥ १० ॥

रघुनाथ ? सनाथमनाथजनं
कुरु मां पतितं गहने तमसि ।
भवतापविनाशकरं वरदं
प्रणमामि सदा भवभीतिहरम् ॥

हे रघुनाथ जी ! घोर अज्ञान रूपी अंधकार में पड़े हुए मुझ अनाथ जन की रक्षा करके सनाथ कीजिए । तीनों तापों को नष्ट करने वाले तथा अभीष्ट प्रदान करने वाले संसार के भय को मिटानेवाले, उन श्रीराम जी को मैं सदा प्रणाम करता हूँ ।

समाप्तः

धन्यवादः

श्रीरामसकलदासः शिक्षको सन् भक्तहृदयः कविरपि। सुन्दरस्तोत्राणां रचनां कृत्वा श्रीरामभक्तिसाहित्याय सोऽनुपमलाभ मददात्। अतोहं तस्मै महानुभावाय धन्यवादं प्रदद भक्तजना अनेन कृतार्थाः भविष्यन्ति।

मनोमोहनाचार्यः

खाकीतड़ाधीश महामण्डलेश्वर श्री म. रामकुमारदासजी की

शुभ संमति

परम सम्मानीय विद्वतवर पण्डित श्रीरामसकल दासजी शास्त्री द्वारा निर्मित श्रीरामांञ्जलि शतकम् अति सुन्दर है। और रामोपासकों के लिए एक अनुपम ग्रन्थ है।

माननीय पण्डित जी ने श्लोकों में जो निर्मल भाव भरा है, वह वास्तव में अपूर्व और अद्भुत है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में कई विभाग हैं बे सभी पठनीय एवं मननीय हैं। मुझे तो ऐसी रचनाओं के प्रकाशन से परमानन्द प्राप्त होता है। माननीय शास्त्री जी को इस परम पावन कार्य के उपलक्ष में श्रीखाकीतड़ अहमदाबाद की ओर से मेरा सादर अभिनन्दन है। साथ ही साथ परम श्री रामभक्त महापुरुष श्रीमहंत स्वामी श्रीजयरामदासजी महाराज को भी हमारा अभिनन्दन है जिन्होंने इन ग्रन्थ रत्न का प्रकाशन किया है। हमें आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि श्रीरामभक्त महानुभावों में यह रचना अवश्य लोकप्रिय बनेगी और इनसे श्रीरामभक्ति के प्रचार में वृद्धि होगी।

भवदीय

श्रीमंहत स्वामी रामकुमार दास खाकी

अहमदाबाद २-७-७८

जयजय कहें जयराम की

जयजय-कहें, जयजय कहें।
जयजय कहें श्रीराम की ॥
श्रीराम-रामानन्द की ।
जयजय कहें जयराम की ॥१॥

जयजय कहें, जय जय कहें ।
जयजय कहें श्री धाम को ॥
उस पूज्य भूमि की कहें ।
जयजय कहें गुरुनाम की ॥२॥

जयजय कहें जयजय कहें ।
जयजय कहें शुभधाम की ॥
श्रीरामनारायणकी जय ।
जयजय कहें जयराम की ॥३॥

जयजय कहें जयजय कहें ।
श्रीराम सकल सुजान को ॥
लेखक महोदय की कहें ।
जयजय कहें जयराम की ॥४॥